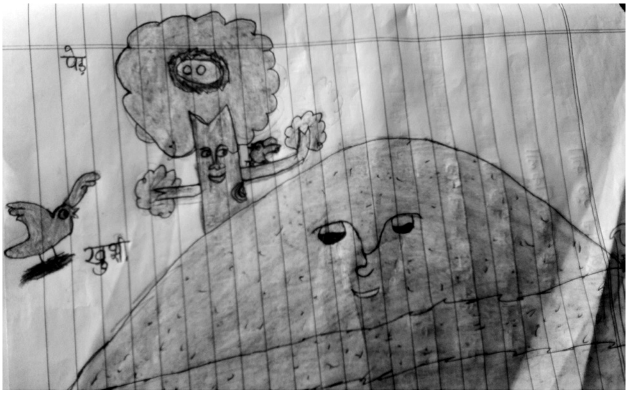
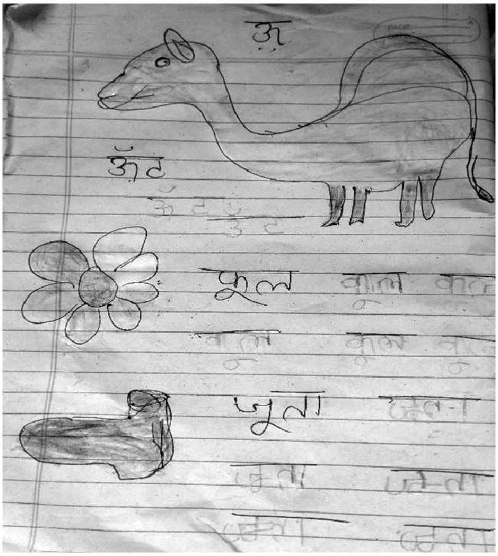
लिखना सीखने की मज़ेदारी

सुनीता

बच्चों को लिखना सिखाने के लिए कई तरीक़े अपनाए जाते हैं। इस लेख में बच्चों की भागीदारी और एक-दूसरे की मदद से लिखना सिखाने के लिए अपनाए गए तरीक़ों के अनुभव शामिल हैं। इन तरीक़ों में बच्चों की मज़ेदारी और रुचियों का ख़ास ध्यान रखा गया। बच्चों द्वारा चित्र बनाना और उसके बारे में एक और फिर एक से ज़्यादा वाक्य लिखना; किसी चीज़ के बारे में चाही गई जानकारी मिलकर जुटाना, उसको लिखना; लिखे हुए को पढ़ना, उसके बारे में बताना; बनाए गए चित्रों में रंग भरना; कविता-कहानियाँ सुनना व उनके बारे में लिखना। आगे चलकर उन विषयों पर लिखना जिनके बारे में बच्चे जानते हैं। इस प्रक्रिया में बच्चों के सीखने के स्तरवार समूह बनाने व इनकी महत्ता पर भी बात की गई है। -सं.

लिखना सीखने की शुरुआत को लेकर अलग-अलग तरह की बातें आपने सुनी होंगी। कुछ लोगों का मानना है कि लिखना सीखना ईंट-दर-ईंट रखने जैसी प्रक्रिया है। पहले बच्चे आड़ी-तिरछी लाइनें बनाना सीखेंगे, फिर अक्षर की बनावट, और तब कहीं जाकर लिखेंगे। कुछ का मानना है कि ब्लैकबोर्ड से बच्चे उतारना सीख जाएँ तो उनको लिखना आ जाएगा। कुछ कहते हैं कि बच्चों को लिखने से पहले चित्र बनाना, आदि जैसे अन्य अभ्यास के मौक़े देंगे तो बच्चे लिखना सीख जाएँगे। लिखने के बहुत-से तरीक़े हो सकते हैं और हमें यह भी मानना होगा कि हर बच्चा अपने तरीक़े से लिखना सीखेगा। लेकिन तरीक़ा रुचिकर होगा तभी बच्चे लिखने से जुड़ेंगे। लिखना सीखना महत्त्वपूर्ण और श्रमसाध्य भी है, इसीलिए लिखना सीखना और सिखाना बच्चों और शिक्षकों दोनों के लिए अकसर चुनौतीपूर्ण कार्य होता है। बच्चे लिखने से जुड़ें, इसके लिए उन्हें ऐसे टास्क देने होंगे जो वे करना चाहें। मैंने पाया कि लिखने की प्रक्रिया को कुछ ऐसे मज़ेदार तरीक़ों से किया जाए जिनमें बच्चों की रुचियों को शामिल कर लिया जाए तो यह लेखन अर्थपूर्ण प्रक्रिया बन जाती है। *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* में भी इस बात की पैरवी की गई है कि बच्चों को लिखना सिखाने के लिए अलग-अलग नवाचार अपनाए जाएँ जिनमें बच्चों का जुड़ाव हो।







मैंने कक्षा 1 और 2 के 30 बच्चों के साथ एक वर्ष तक उनके आरम्भिक लेखन पर काम किया। शुरुआत ब्लैकबोर्ड पर चित्र बनाकर उस चित्र के नाम और उसपर एक-एक वाक्य लिखने के साथ हुई। यह वाक्य कभी मैं, तो कभी बच्चे बताते थे और तब बच्चों को इन वाक्यों को अपनी कॉपी में लिखना होता था। लिखने की शुरुआत में बच्चों को चित्र बनाने में मुश्किल होती थी और उन्हें स्वयं के बनाए चित्र पसन्द भी नहीं आते थे। इसके लिए समय-समय पर बच्चों को प्रोत्साहित करते रहना पड़ा कि आपने अच्छा चित्र बनाया है, और बनाते-बनाते चित्र और बेहतर होंगे, आदि। धीरे-धीरे बच्चों को ख़ुद से चित्र बनाकर वाक्य लिखने में मज़ा आने लगा। वे यह भी समझने लगे कि हम चित्रों के बारे में जो बात बोलते हैं, वही बात लिखी और पढ़ी भी जा रही है। हमने ऐसे ही कुछ नहीं लिखा है, बल्कि जो बात लिखी है उसका कोई मतलब भी है। मसलन, घर पर हम रहते हैं, नल से पानी भरते हैं, आदि जैसे वाक्य।

शुरुआती कुछ दिनों तक हम रोज़ कुछ नए चित्र बनाते और हर एक चित्र पर केवल एक वाक्य ही लिखते, क्योंकि शब्दों और अक्षरों को पहचानने और पढ़ने का काम भी साथ-साथ चल रहा था। जैसे-जैसे बच्चे कुछ शब्दों को पढ़ने लगे तब हम किसी एक ही चित्र या विषय पर एक से अधिक वाक्य बनाने की तरफ़ बढ़े। हमने यह चिन्ता नहीं की कि बच्चे अभी सारे अक्षरों को पहचानते ही नहीं हैं। इस पूरी प्रक्रिया में फ़ोकस गाइडेड लेखन और स्वतंत्र लेखन को साथ-साथ ही देखा गया।

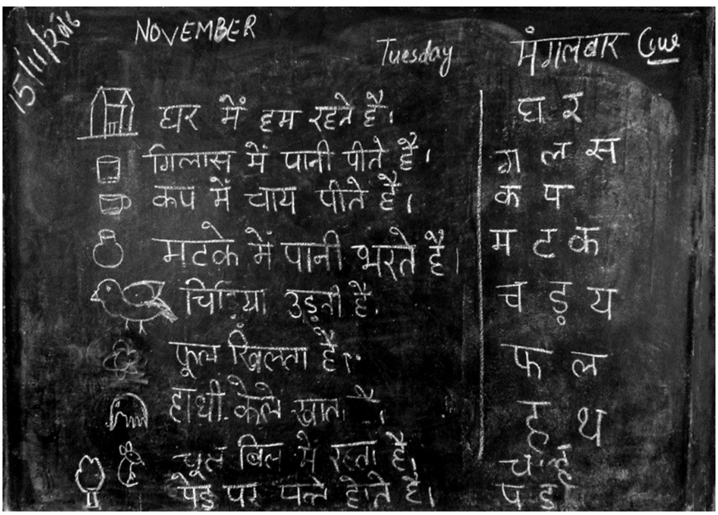
यहाँ एक बात मैंने महसूस की कि मुझे बच्चों को कभी अलग से मात्राएँ नहीं सिखानी पड़ीं। बस कभी-कभी लिखते वक़्त कुछ मात्राएँ बतानी होती थीं कि किस शब्द में कौन-सी मात्रा आएगी और उसे लिखते व पढ़ते कैसे हैं। धीरे-धीरे यह देखने में आया कि बच्चे अपने लिखे वाक्यों को बख़ूबी पढ़ने लगे और पढ़ने-लिखने में उन्हें मज़ा भी आने लगा। इस पूरी प्रक्रिया में यह बात भी उभरकर आई कि एक समय के बाद कक्षा में पढ़ने-लिखने के काम में काफ़ी विविधता आ गई थी। कुछ बच्चे वाक्यों को पढ़ते-लिखते कब बाल साहित्य की किताबें और कक्षा में लगी प्रिंट सामग्री पढ़ने लगे, यह मुझे ख़ुद भी पता नहीं चला।

कुछ समय बाद बच्चों के पढ़ने-लिखने की गति को देखते हुए मैंने समूह बनाकर काम करना शुरू किया। चूँकि कक्षा 1 और 2 के लगभग 30 बच्चे थे तो यह तय हुआ कि हम 4



समूह बनाते हैं। प्रत्येक समूह में कुछ ऐसे बच्चे हों जिन्हें पढ़ना-लिखना आ गया हो, ताकि वे, पढ़ने-लिखने में एक दूसरे की मदद कर सकें। यह काम भी कुछ दिनों तक लगातार चलता रहा और अब भी बच्चे पढ़ने-लिखने में एक दूसरे की मदद करते हैं।

अगले क्रम में बच्चों को समूह में ऐसे कुछ प्रश्न देकर जानकारी लिखने का काम दिया गया जिनके बारे में वे ख़ुद सोचकर लिख सकते थे। मसलन, पानी हमें कहाँ से मिलता है, पानी से हम क्या-क्या करते हैं, आदि।



बच्चों को यह बताया गया कि उन्हें अपनी कॉपी में एक दूसरे की मदद से जानकारी इकट्ठी करके लिखना है। इस प्रक्रिया के दौरान मैंने देखा कि बच्चों ने लिखने में भी एक दूसरे की मदद की। यहाँ यह भी तय किया गया था कि वे एक दूसरे को शब्द में आई ध्वनियों को भी एक-एक कर बताएँ कि शब्द कैसे लिखा जाएगा। बच्चों ने काफ़ी जानकारी एकत्रित कर ली थी। उन्होंने पूरी सूची बनाई थी कि पानी कहाँ से मिलता है और पानी से हम क्या-क्या करते हैं।

बच्चों से इसपर बातचीत करते हुए सभी बिन्दुओं को ब्लैकबोर्ड पर लिखा गया ताकि अगर किसी ने कोई बात छोड़ दी हो तो वह भी लिख ले। चूँकि बच्चों के पास पानी के बारे में पर्याप्त जानकारी और शब्द भण्डार था, इसलिए बच्चों ने यह काम ख़ुशी-ख़ुशी किया। इस प्रक्रिया की बजाय अगर उनसे यह कहा जाता कि जल की उपयोगिता के बारे में पाँच वाक्य लिखो तो शायद यह काम उन्हें बोझिल लगता!

इस तरह लिखने का काम निरन्तर आगे बढ़ता रहा। किस चित्र पर वाक्य बनाएँगे, यह बातचीत लगभग रोज़ ही बच्चों के साथ होती थी। हम सब मिलकर तय करते थे कि ब्लैकबोर्ड पर किसका चित्र बनेगा। धीरे-धीरे इन चित्रों के बारे में लिखे जाने वाले वाक्यों की संख्या को भी हमने बढ़ा दिया था। कभी-कभी बच्चे



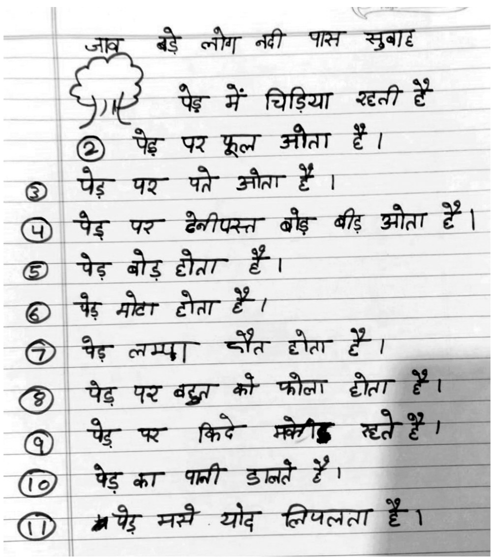
चित्र का विवरण भी देते कि कैसा चित्र बनाना है। वे बताते जाते और मैं वैसा चित्र ब्लैकबोर्ड पर बना दिया करती। पर अब चित्र के बारे में वाक्य बच्चों को स्वयं ही बनाना था, और वाक्य भी एक से ज़्यादा बनाने थे। वाक्यों को लिखने के बाद बारी-बारी से सबको इन्हें पढ़ना भी था, और बच्चे इन्हें पढ़ भी रहे थे। पढ़ने के दौरान किसी को भी समस्या नहीं हुई क्योंकि जो भी वाक्य चित्रों के साथ थे, वे बच्चों ने ही बनाए थे।

इस पूरी प्रक्रिया में कई चीज़ें हो रही थीं। बच्चे अपने ज़ेहन में आया वाक्य बताते थे। वे जब वाक्य बताते, दूसरे बच्चे उन वाक्यों को ध्यान से सुन रहे होते थे। वे देख रहे होते थे कि मैं क्या लिख रही हूँ। मैं जल्दी-जल्दी नहीं लिखती थी, और जो भी लिखती, उसे लिखते समय बोलती भी जाती थी। इससे शायद बच्चों को कुछ मदद हुई हो! वे अनुमान लगाकर भी पढ़ने की कोशिश करते। जिन बच्चों को पढ़ना नहीं आता था वे ब्लैकबोर्ड के पास आने से हिचकते थे, पर जब उन्होंने पढ़ने की कोशिश की और कुछ पढ़ पाए तो उनका उत्साह बढ़ा। उनमें आत्मविश्वास आया कि वे भी पढ़ सकते हैं। इस तरह पढ़ने के बाद वाक्यों और चित्रों को कॉपी पर बनाना था। वे कुछ अन्य चित्र बना रहे थे और वाक्य भी लिख रहे थे जिससे उनके लिखने का काम भी लगातार चलता रहा।

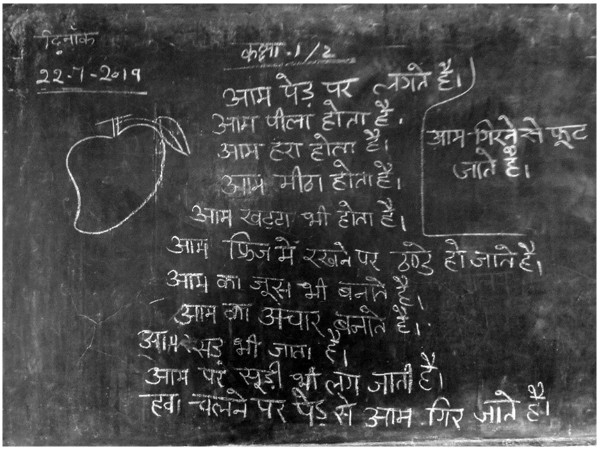
जैसा कि मैंने शुरुआत में बताया था कि मेरे पास कक्षा 1 से 4 तक के बच्चे थे। मैं कुछ काम बच्चों के स्तर को ध्यान में रखते हुए भी कर रही थी। मसलन, कक्षा 1 के बच्चे, जो बेहद शुरुआती स्तर पर थे, केवल चित्रों के नाम ही लिखते थे। साथ ही, उनके साथ चित्रों से सम्बन्धित शब्दों में आए अक्षरों को अलग करके लिखने का काम भी किया, ताकि बच्चों को अक्षर की पहचान भी हो जाए। जो शब्द बच्चे ग़लत लिख लेते थे, उनको ठीक से लिखकर भी दिखाया गया।

अगले चरण में मैंने प्रक्रिया को उलट दिया। मैंने सिर्फ़ वाक्य लिखे और बच्चों ने वाक्य से सम्बन्धित चित्र बनाए। ऐसा इसलिए किया गया क्योंकि कई बार बच्चे एक ही तरह के काम करते-करते ऊबने लगते हैं और फिर उनमें लिखने के प्रति नीरसता पैदा हो जाती है।

बच्चों के साथ चित्र बनाने, चित्रों पर वाक्य लिखने, चाही गई जानकारी को मिलकर एकत्र



करने की प्रक्रिया बेहद मज़ेदार रही। चित्र बनाने का फ़ायदा यह भी हुआ कि बच्चों की लिखावट भी बेहतर हो गई है। किसी बच्चे को कर्व लाइन, सीधी लाइन, आदि के बारे में कुछ बताने की ज़रूरत ही नहीं पड़ी। चित्र बनाने के बाद रंग भरने का काम (वैक्स कलर से) भी साथ-साथ चलता रहा। बच्चों की फ़ाइन मोटर ग्रिप (हाथ की माँसपेशियों की पकड़) लिखावट के लिए तैयार हो रही थी।



मुझे अच्छा लगता जब बच्चे पूछते थे कि मैम, अब हम किसके बारे में जानकारी जुटाएँ। मुझे यह भी अच्छा लगा कि कक्षा का हर बच्चा सक्रिय सहभागिता के साथ पढ़ने और लिखने में रुचि ले रहा था। यहाँ तक कि बच्चे स्वयं ही बताने लगे थे कि किसने कौन-सा वाक्य बोला है, किसकी बात दर्ज हुई और किसकी रह गई। दूसरा, यह भी देखने को मिला कि जिन्हें शब्द लिखना नहीं आ रहा था वे चित्र बनाने की कोशिश करने लगे थे, और जिन्हें वाक्य लिखने में परेशानी हो रही थी, वे उन चित्रों के नाम लिखने लगे थे। काम के दौरान बच्चे एक दूसरे का सहयोग करने में कोई कमी नहीं छोड़ते थे, चाहे किसी की चित्र बनाने में मदद करना हो या रंगों को एक दूसरे से साझा करना। इस काम के दौरान कक्षा में बच्चों से यह बातचीत भी की गई कि चित्रों को कितने बड़े आकार में बनाया जाए ताकि लिखने के लिए भी ठीक-ठाक जगह मिल जाए। धीरे-धीरे बच्चे स्वयं लिखने के बाद अपनी कॉपी से पढ़ने की कोशिश करने लगे।

आगे यह काम कविता-कहानियों के साथ जुड़ता गया। यहाँ भी बच्चे कविता-कहानियों का आनन्द लेने के बाद लिखने में यही प्रक्रिया अपनाते गए। यह भी देखने को मिला कि जो बच्चे ज़्यादा अनुपस्थित रहते और कक्षा में भी ध्यान नहीं देते थे, उन्होंने भी कक्षा में शब्द लिखने में रुचि दिखाई। लिखने के बाद अलग-अलग समूह बनाकर पढ़ने की गतिविधियाँ की गईं। जिन बच्चों ने वाक्य लिखे थे उनका एक समूह, और जिन्होंने शब्द लिखे थे उनका एक अलग समूह बनाया। सभी ने अपनी-अपनी कॉपी से स्वयं पढ़ा। जिन बच्चों को पढ़ना नहीं आ रहा था, वे भी अनुमान से सही पढ़ रहे थे।

अगले चरण में सभी बच्चों को उनके स्तर के अनुसार कहानियों की किताबें दी गईं। बच्चों ने आधा घण्टा किताबों को पढ़ा और पढ़ी हुई कहानी को अपने शब्दों में लिखा। कहानियाँ पढ़ने के बाद चित्र भी बनाए। जो बच्चे अक्षर पहचान कर चुके थे, वे अक्षरों को जोड़कर शब्द भी लिखने का प्रयास कर रहे थे। बच्चों से यह भी कहा कि अपनी-अपनी कॉपी में शब्दों की ग़लतियों को ख़ुद से ठीक कर लें। इससे उनका आत्मविश्वास भी बढ़ा।

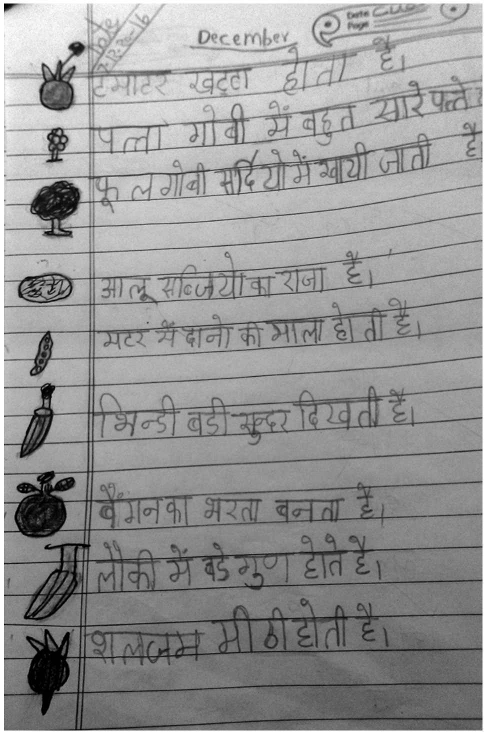
जब बच्चों के लिखने में प्रगति दिखने लगी तब लिखने की प्रक्रिया में कुछ और चीज़ें जोड़ी गईं, जैसे– अब हम 'पानी की कहानी', 'जंगल की जुबानी' आदि लिखेंगे। लिखने में थोड़ी विविधता और गहराई आए, इसके लिए बच्चों से इन बिन्दुओं पर चर्चा हुई कि पानी के बारे में हमें क्या-क्या पता है और जंगल के बारे में हमें कितनी जानकारी है। बातचीत के दौरान जब उनसे पूछा कि अगर पानी न होता तो क्या होता और जंगल न होता तो क्या होता, इसपर बच्चों

ने कुछ-कुछ बातें बताईं। जैसे– पानी नहीं होता तो पानी नहीं पी पाते, मुँह नहीं धो पाते, खाना नहीं बना पाते, कपड़े नहीं धो पाते, और नहाने को भी नहीं मिलता। एक बच्चे ने कहा कि हम पानी के बिना जी ही नहीं पाते। जंगल वाली बात पर बच्चों ने कहा कि अगर जंगल न होते तो पेड़, जानवर आदि भी नहीं होते। शुरुआत में बच्चे इस तरह के जवाब देते रहे, पर और बातचीत करने पर उनकी ओर से यह बात भी आई कि अगर जंगल न होते तो जंगली जानवर कहाँ रहते!

चूँकि अब हमें वाक्यों से आगे कहानी निर्माण की तरफ़ भी बढ़ना था, इसलिए उससे सम्बन्धित जानकारी को ब्लैकबोर्ड पर लिखा गया और बच्चे कहानी लिखने की तरफ़ आगे बढ़े।

इस पूरी प्रक्रिया से जो निष्कर्ष मैंने निकाले, वे ये रहे –

- बच्चों के साथ उनके लिखे पर लगातार बातचीत करना बहुत ज़रूरी है।
- मुझे यह भी समझ आया कि बच्चों को यह अच्छा लगता था कि उन्हें बताया न जाए बल्कि उनसे पूछा जाए कि उन्हें क्या करना है।
- इस प्रक्रिया में मुझे शिक्षक की योजना और उस योजना में बच्चों की शामिलियत का महत्त्व पता लगा। यह भी समझ बनी कि बच्चों के काम का लगातार अवलोकन करना चाहिए और उन्हें समझना चाहिए।
- बच्चों की रुचियों को जोड़े रखना भी पढ़ने-लिखने में काफ़ी मदद करता है। साथ ही इस प्रक्रिया से पता चला कि बच्चों को शुरुआत में पढ़ने और लिखने में चित्र काफ़ी मदद करते हैं और लिखने का सूत्रपात अक्षर, मात्राओं की शुरुआत के बग़ैर भी किया जा सकता है।



जैसा कि मैंने बताया, यह काम पूरे साल किया गया। इस लेख में उस काम की एक झलकभर ही है। मैंने यहाँ पढ़ने-लिखने की कुछ मुख्य गतिविधियों को दर्ज किया है, और यह भी कि हर गतिविधि एक लम्बे समय तक बच्चों के साथ की गई। बच्चों की प्रतिक्रियाओं को ध्यान में रखते हुए, उनसे उनके लेखन पर, यथा– नए शब्दों, शब्दों की वर्तनी, नए विचारों को जोड़ने और समूह में काम करने के बारे में भी बातचीत हुई। मुख्य फ़ोकस यही रहा कि बच्चे पढ़ने और लिखने की दिशा में कुछ आगे बढ़ें।

सुनीता दो दशक से भाषा शिक्षण के क्षेत्र में सक्रिय हैं। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में उत्तराखंड के ऊधम सिंह नगर में भाषा स्रोत व्यक्ति के रूप में कार्यरत हैं।

सम्पर्क : sunita1@azimpremjifoundation.org